P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika
E: ISSN NO.: 2349-980X Vol-III* Issue-V* January-2016

बदलती धार्मिक परम्पराएंः नीती–माणा जनजातीय घाटी

बचन सिंह
सहायक प्राध्यापक,
इतिहास विभाग,
राठ महाविद्यालय पैठाणी,
पौड़ी गढ़वाल

बीना सकलानी
एसोसिएट प्रोफेसर,
मानवशास्त्र विभाग,
हे0न0ब0 गढ़वाल विश्वविद्यालय
(केन्द्रीय विश्वविद्यालय), श्रीनगर
गढ़वाल

सारांश

नीती माणा घाटी चमोली जिले के सीमांत क्षेत्र में स्थित जनजाति बहुल समुदाय है। इन क्षेत्रों में भोटिया जनजाति के लोग सदियों से निवास करते आ रहे है। इनका जीवन पशुचारण एवं व्यापारिक के साथ–साथ कृषि भी रहा है। प्रकृति के साथ अनन्य आस्था व विश्वास के आधार पर इनका इन सीमांत कठिन परिस्थितियों में रहना सम्भव हुआ है। जिस कारण इनका अनेक देवी–देवताओं पर आस्था व विश्वास बना हुआ है जिनका यह जनजाति सदियों से परम्परागत रूप से निवाहन करते आ रहे ह, परन्तु समयानुसार इनके धार्मिक विश्वासों तथा परम्पराओं में अन्तर आने लगा है। आधुनिक युग की चराचरी में इनके धार्मिक परम्पराओं का विलोपन के कारण तथा बची हुई परम्पराओं के निर्वाहन का इस शोधपत्र में वर्णन किया गया है। शोधकार्य अवलोकन व साक्षात्कार व धार्मिक गीतों, जागरों व मांगलों को मुख्य आधार बनाकर प्रस्तुत किया गया है। शोधार्थी इस कार्य में गाँव के बुजुर्गो से जटिल शब्दों का सरलीकरण करने में सहायता ली गयी तथा कुछ शब्दों का स्वयं भी सरलीकरण किया गया।

मुख्य शब्द : उबदेश, दाणपुजै, सारू, बाकरू, छ्योत, पत्यूण, सिल्दू, लवूण–पकड़ा, जान, अग्याव, च्योंचू, औथरिगू, जूठू–पीठू, घड्याल्या, न्याजा–निशाण, बाणू, छीछड, जस्करू, च्वख्युण, रोंट।

प्रस्तावना

भारत में निवास करने वाली जनजातियों में अपनी विशिष्टता को दर्शाने वाली चमोली जनपद की नीती–माणा घाटी भारत–चीन सीमांत जनपद में स्थित है। 'भारद्वाज' गोत्र की यह जनजाति स्वयं को सूर्यवंशो क्षत्रिय मानते है।[1] इस जनजाति के लोगों द्वारा अपने आराध्य देवी–देवताओं की पूजा सदियों से चली आ रही परम्पराओं के अनुरूप होता है। इस घाटी में मुख्यतः शिव व शक्ति की पूजा की जाती है, जो आर्यो की सभ्यता से पूर्व की मानी जाती है। भूतों क ईश शिव का कैलाश इसी भूमि से जुडा हुआ है।[2] इसलिए इस क्षेत्र के लोगों में जड़ पदार्थ भूत–प्रेत, जादू–टोना तथा शास्त्र व जागर पर विश्वास करते है। नीती घाटी की मारछा व तोलछा जनजाति के लोगों की देवीय आस्था उनके पारम्परिक गीतों, चांचडी, मांगल गीतों, शगुन गीत, स्वागत गीत, पहरावा गीत, जागर आदि में किया जाता है। हर कार्य पर चाहे वह सुख हो या दुःख में देवी–देवताओ पर आस्था व समर्पण की भावना दिखाई देती है।

भोटिया जनजाति के लोग हिन्दू परम्परा के अनुसार मूर्ति पूजा करते ह। प्राचीन कालीन शंक्वाकार छोटे–बड़े पत्थरों का इस क्षेत्र के मंदिरों में अधिकतर पाया जाना इन पत्थरों को देवता की मूर्ति के रूप में पूजा स्थलों और मंदिरों में रखे जाते थे। नीती–माणा घाटी में बहुत ऊँचे–ऊँचे खड़े पर्वत प्रहरी बनकर इस क्षेत्र की रक्षा कर रहे हैं, इन निर्जन पर्वतों के बीच में रहकर इन जनजातियों न

अपनी एक विशिष्ट संस्कृति को जन्म दिया, इनका मानना है कि इन पर्वतों में भगवान निवास करते है, जिस कारण पत्थर की मूर्ति में भगवान का वास मानकर पूजा करते है।

नीती–माणा घाटी के जनजाति में प्राचीन काल से ही पेड़–पौधों से लेकर जानवरों तथा देवी–देवताओं पर अटूट विश्वास आज भी दिखाई देता है। इस घाटी के निवासियों को गाँव की सीमा में प्रवेश करते ही सुखद अहसास उन्हें सीमान्त गाँवो 'उपदेश' में रहना अधिक सुहाता है, क्योंकि उनका अधिकांश समय इस पावन भूमि में व्यतीत हुआ है। इस घाटी के निवासियों का प्रकृति पर अत्यधिक आस्था के कारण किसी भी कार्य की शुरूआत पूजा से की जाती है। जिन्हें विभिन्न स्थानीय नामों जैसे– खेत जोतने की शुरूआत में की जाने वाली पूजा 'शिजोत', व्यापार में जाने से पहले, शादी–व्याह, मुण्डन या अपने गाँवों में सकुशल पहुँचने पर की जाने वाली पूजा 'दाणपुजे' (पित्र पूजा) कहलाती है। किसी कठिन कार्य के सफल हो जाने पर ईष्ट देवता को पूजा देना आदि इस जनजातीय समाज की देवी–देवताओं में असीम आस्था ही माना जा सकता है।

चमोली जनपद के भोटिया जनजातियों द्वारा किये जाने वाले विभिन्न धार्मिक कार्य

सारू चलूण

सभी परिवारों के गाँव में पहुँचने के बाद सबसे पहले 'सारू' का रोंट (रोटी) चलाया जाता है। किसी भी बार (बुधवार व शनिवार को छोड़कर) को गाँव की शुद्धिकरण के लिए सभी परिवारो के गाँव पहँचने पर 'सारू' चलाया जाता है। 'सारू' छः माह में दो बार चलाया जाता है। पहली बार जब सभी गाँव में रहने वाले परिवार नीती घाटी में आते है, तब गाँव से ऊपर की ओर (नीती घाटी की ओर) चलाते है। दूसरी बार जब निचली घाटी के शीतकालीन गाँव की ओर जाने लगते है तब सारू नीचे की ओर (जोशीमठ की ओर) चलाते है। मारछा बोली में कार्यक्रम को 'ख्वी फन्नाः' कहते है। शौका जनजाति में इसे 'धूरमा' पूजा कहते है।[3]

रगोसू

गाँव में पहुँचकर सबसे पहले गाँव व घर की शुद्धिकरण के लिए पूजा की जाती है, ताकि गाँव में रह रही बुरी आत्माएं भाग जायें व गाँव वाले खुशी–खुशहाल से रहे। जिसे तोलछा बोली में 'रगोसू' व मारछा बोली में 'सुजापंग' कहते है।[4]

बार खुलूण

जब नीती घाटी के लोग अपन शीतकालीन आवास से ग्रीष्मकालीन आवासों में पहुँचने के बाद जून (आषाढ़) माह के पहले हफ्ते में किसी एक दिन 'बार' खुलाने अर्थात पूजा आदि करने के लिए गाँव के मुख्य देवता से आज्ञा माँगने के लिए गाँव के ईष्ट देवता की पूजा करते है। नीती घाटी में देवताओं की पूजा के लिए बार (दिन) खोलने व बन्द करने की परम्परा यहाँ के निवासियों के द्वारा सदिया से चली आ रही है। ठीक उसी प्रकार जैसे भगवान बदोनाथ जी के 'पट' के बन्द होने व खोलने की परम्परा चली आ रही है। ऐसा माना जाता है कि बद्रीनाथ जी के कपाट बन्द होने के बाद यहाँ की पूजा नारद जी के द्वारा की जाती है।[5]

जिस प्रकार 'बार (दिन) खुलाने' की प्जा सभी परिवारों के गाँव पहुँचने पर होती है, उसी प्रकार गाँव के लोगों का शीतकालीन आवास जाने से पहले 'बार बन्द' करने की पूजा की जाती है। इस समय भी बलि देकर देवताओं का आह्वाहन किया जाता है कि अब हमें गाँव से जाने की आज्ञा दी जाय, अगले वर्ष आकर बार खुलाने की पूजा के साथ ही भेंट करेंगे। इस पूजा को प्रत्येक गाँव में अलग–अलग नाम दिया जाता है। जैसे– जेलम में 'कातिगदी बाकरू', मलारी में 'ब्वंगच्या बाकरू' द्रोणागिरि में मखुनी देवी की पूजा आदि।

छ्योत

नीती घाटी के भोटिया जनजाति के लोगों में देवीय आस्था इस कदर है कि किसी भी खाद्यवस्तु को खाने, पेय पदार्थ को पीने से पहले थोड़ा सा हिस्सा हवा में उछालते हुए 'छ्योत' शब्द का उच्चारण करते है। जैसे छंग या अन्य पेय द्रव को पीने से पहले अंगुलियों से थोड़ा सा पेय द्रव को उछालते हुए 'छ्योत परमेश्वर' कहते ह और इसके बाद ही उसे पीते या खाते है। मान्यता है कि ऐसा भगवान को व पित्रों के लिए थोड़ा मात्रा चढ़ाने के लिए किया जाता है। इन लोगों का मानना है कि किसी भी वस्तु का भोग करने से पहले उसे देवी–देवताओं के नाम से छेत करना आवश्यक है, नही तो देवी–देवता रूठ जायेंगे। इस प्रकार की परम्परा का निर्वहन करते हुए आज भी देखने को मिलता है।

नीती माणा घाटी के प्रमुख देवी–देवता

भूमियाल देवता

देवी–देवताओं में सबसे प्रमुख देवता 'भूमियाल' (भूमि के मालिक देवता) को मानते है। भूमियाल गाँव का रक्षक देवता माना जाता है तथा 'क्षेत्रपाल' बुरी आत्माओं व महामारी आदि का रक्षक देवता माना जाता है। गाँव में होने वाले सभी छोटे–बड कार्यो को करने से पहले भूमियाल देवता के 'पश्वा' पर देवता अवतरित कर गाव का मुखिया या पंच लोग पूछते है कि अमुख कार्य को कब और कैसे किया जाय, जैसा पश्वा के द्वारा कहा जाता है उसी प्रकार कार्य किया जाता है। हर गाँव का अपना भूमियाल देवता होता है। जिनको अलग–अलग नामों से जाना जाता है। जैसे– जेलम का भूमियाल क्षेत्रपाल, सेंगला का हामिरदाणू, मलारी का सौंदेवता, फरकिया गाँव व बाम्पा गमसाली का फैला ओर कोषा व द्रोणागिरि का पर्वत देवता तथा माणा में घन्याल आदि। अन्य जनजातियों में जैसे– कुट्टी में 'गुलाच', गुंजी में 'नामिती', नाबी में 'थाप्यूड, चौंदासी में 'स्यांसै', दारमा में 'मरदुसै' कहा जाता है।[6] गाँव का सबसे बडा देवता होने के कारण भूमियाल देवता का मंदिर भी गाँव के सबसे उपरी छोर पर स्थित होता है। किसी भी बार–त्यौहार को भूमियाल देवता के मंदिर में दिया–धूप जलाकर भोग दिया जाता है।

नन्दा भगवती

नन्दादेवी को नन्दा भगवती के नाम से पूजा जाता है तथा हर बारहवें वर्ष में माँ नन्दा की डोली नीती घाटी में अपनी देवरा यात्रा हेतु जाती है। गढ़वाल की प्रसिद्ध नन्दादेवी की जात्रा में भी लाता की नन्दादेवी की डोली वाण में मिलती है तथा होमकुण्ड़ होते हुए वापस लाता आती है। इस प्रकार इस सम्पूर्ण घाटी की नन्दा

देवी में आस्था बनी हुई है। लोग अपनी मनोकामना पूर्ण होने पर नन्दा देवी के थान लाता में पूजा हेतु आते है। लाता गाँव में अष्टमी व बिखोदी को नन्दादेवी की पूजा अर्चना बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। नीती में बड़ी व छोटी नन्दादेवी की पूजा की जाती है। जेलम ग्राम में नन्दा अष्टमी का पर्व बड़े हर्षोल्लास के साथ तीन दिनो तक मनाया जाता है।

कुलदेवी भगवती

जनपद चमोली के सीमांत क्षेत्र के लागों की अपने सार्वजनिक देवताओं के अलावा अपने कुल की देवी भी होती है, जिसे देवी भगवती मानकर हर वर्ष पूजा की जाती है। परन्तु आज के इस युग में समय की अभाव व लोगों का पलायन के कारण हर तीसरे व पाँचवें वर्ष में एक कुल के अनेक परिवार के लोग आकर पूजा–पाट कराकर कुलदेवी की पूजा–अर्चना करते है। इनमें से किसी एक सदस्य पर देवी अवतरित होती है जिससे ये लोग अपनी कष्टों के निवारण हेतु उपचार पूछते है और आर्शीवाद देकर चली जाती ह। देवी के द्वारा बताये कार्यों पर अमल करने के साथ ही यह कार्य सम्पन्न माना जाता है।

नृसिह देवता

चमोली जनपद में स्थित जनजातियों के अनेक गाँवों में नृसिंह देवता की पूजा 'नरसिंह' देवता के नाम से की जाती है। जोशीमठ में स्थित नरसिंह मंदिर इस क्षेत्र का सबसे प्रसिद्ध मंदिर है जिसका निर्माण कत्यूर काल में हुआ था।[7] नीती घाटी के तोलछा वर्ग में दूदाधारी नरसिंह देवता की पूजा की जाती है। नरसिंह देवता के यहाँ हर तीसरे साल में दी जाने वाली पूजा को स्थानीय बोली में 'तिबाई देना' कहते है।

भैरव देवता

भैरव देवता की पूजा भी नरसिंह देवता के साथ की जाती है। परन्तु भैरव देवता को मांसाहारी भोग बनाया जाता है। इसलिए नरसिंह मंदिर के द्वार के विपरीत भैरव देवता का मंदिर होता है। भैरव के अनेक रूपों में पूजा की जाती है।

शिवजी

चमोली जनपद के जनजातीय क्षेत्र भगवान शिवजी का कर्म क्षेत्र माना जाता है। 1960 ई0 पूर्व यहाँ से कैलाश मानसरोवर यात्रा किया जाता था। नीती स्थित ट्यमर सेम महादेव प्राकृतिक रूप से निर्मित शिव का पावन एतिहासिक स्थान है। नीती घाटी को शिवशंकर भगवान की स्थली माना जाता है, जिस कारण शिव भूमि में रहने के कारण ये लोग अपने को और जातियों से ऊँची जाति के मानते है।[8] जेलम में स्थित 'स्वेनीगाड़' महादेव, जुम्मा का शिव मंदिर, नीती का ट्यमर सेम महादेव, भल्लागाँव का महादेव, भविष्य बद्री द्रोणागिरि का नन्दी ताल आदि जगहों पर श्रावण माह शिवजी की पूजा करने व जल चढाने के लिए जाते है।

पित्र देवता

तोलछा वर्ग में पित्रों की पूजा होती है जिसे 'दाणपुजै' कहते है। यह मुख्य रूप से अपने पूर्वजों की पूजा है जिसे किसी भी बार–त्यौहार या शुभ कार्य के समय सबसे पहले सम्पन्न करते है। जिसे पिथौरागढ़ के जनजातीय लोग 'स्यिमी ठुमौ' कहत है।[9] इसके पीछे उनका मानना है कि सबसे पहले अपने 'पित्रों' को भोग देना चाहिए, उसके बाद अन्य कार्य करने चाहिए। ऐसा शायद इनके सदियों से चले आ रहे परम्परा अपने से बड़ों का आदर करना तथा किसी भी कार्य करने से पहले बड़ो को 'पूछना'(सलाह लेना) या बड़ों की आज्ञा के बिना कोई कार्य नही करना रहा होगा। पित्रपूजा में 'पत्यूणों' '(धातु की मूर्ति) की पूजा की जाती है। जब कोई व्यक्ति मर जाता है तो उसकी चाँदी की मूर्ति बनाते है, जिसे स्थानीय भाषा में 'पत्यूण' कहते है। इस दिन 'लवूंण–पकुड़ा'(पूरी–पकौड़ी), 'सिल्दू'(फाफर के आटे का भोग), चावल व 'जान'(अनाज से बना एक प्रकार का बीयर) का भोग चढ़ाया जाता है।

भूत (मसाण पुजे)

नीती–माणा घाटी के लोगों का मानना है कि मृत व्यक्ति की आत्मा भटकती है। यदि कोई व्यक्ति किसी ऐसे स्थान पर जहाँ शमशान हो या भूतिया जगहा हा पर डरा या गिरा या चिल्लाया हो तो उस पर वह आत्मा के गिरफ्त में आ जाती है जिसके निवारण के लिए उस आत्मा की पूजा हेतु बलि देकर पूजा करनी पड़ती है जिसे भूत या मसाणा पुजे कहते है। दारमा भोटिया समुदाय में इस प्रकार की पूजा को 'ग्वन' या 'ढूरिंग' कहते है।[10]

ऐड़ी–ऑछरी

प्रकृति की देवी ऐडी–ऑछरी की पूजा करते है जो 'छय्या' (साया) के रूप में खासकर गाँव की धियाणियों पर अधिक लगता है। प्रत्येक महिला को एक न एक बार 'छय्या' पूजना पड़ता है। वन देवी व बयाल देव (वायु देव) की भी पूजा करते है।

पंचनाग देवता

नीती घाटी में पाँच गाँव के लोगों द्वारा नाग देवता की पूजा की जाने के कारण नीती घाटी में नाग देवता को पंचनाग देवता के नाम से जाना जाता है। बाम्पा स्थित नाग देवता का 'स्यमार' (हरा भरा घास का मैदान) में प्राकृतिक रूप से बना नाग का फन यहाँ के लोगों की आस्था का प्रतीक है।

प्रमुख देवनृत्य

पाण्डव देवता

भादो माह में नीती घाटी के इस पावन घाटी के कुछ गाँवों में पाण्डव नृत्य का आयोजन होता है, जिन्हें स्थानीय बोली में 'पन्नौ नाचण' कहते है। जिसमें पाँच भाई पाण्डव, माता कुन्ती, द्रौपदो, बबरील बाऊ, हनुमान आदि देवता के 'पश्वा' अवतरित होते तथा देवताओं के 'न्याजा–निशाण' (अस्त्र–शस्त्र) लेकर नाचते गाते है। सात दिन तक पाण्डव नृत्य का आयोजन होता है। जिसमें एक दिन में दो खोई (एक सम्पूर्ण तालो का संग्रह) नाचते है। एक खोई में 9 ताल होते है। इस प्रकार पूरे दिन में 18 तालों का नाच होता है।[11] जेलम, मलारी व गमसाली के लोगों से साक्षात्कार से पता लगा कि यहाँ सदियों से यह परम्परा चली आ रही है। अवलोकन द्वारा शोधार्थी ने पाया कि अलग–अलग गाँवों के पाण्डव नृत्य के कुछ ताल व छन्द अलग–अलग व कुछ समान होते है। पाण्डव नृत्य अलग–अलग मुद्राओं में किया जाता है। पाण्डव अपनी वेश–भूषा तथा न्याजा–निशानों जैसे कलश, गदा, धनुष–बाण आदि से सुसज्जित होकर नाचते है। प्रत्येक

नर्तक अलग–अलग पात्रों की भूमिका में अनेक मुद्राओं में नृत्य करता है। नृत्य बाजगी के तालों के अनुसार होता है तथा प्रत्येक देवता का अलग ताल होता है जिसे वे क्रमानुसार नृत्य करते है। रात्रि के समय मनोरंजन के लिए कौरव व पाण्डवों के मध्य संवाद व हास्यादपद संवाद होते है जिससे उपस्थित लोगों का मनोरंजन के साथ असत्य पर सत्य की जीत से संदेश दिया जाता है। नृत्य के समापन के पहले दिन पाण्डव स्नान के लिए किसी तीर्थ स्थल जैसे– स्वेनीगाड़, भापकुण्ड़ तथा बद्रीनाथ इत्यादि स्थलों पर जाते है उसके अगले दिन सभी ग्रामवासियों व धियाणियों से सामूहिक भेंटकर विदा होते है। इसके साथ ही पाण्डव नृत्य समाप्त माना जाता है।

ऐसी मान्यता है कि पाण्डवों के सभी बाणों को नचाने से गाँव की समृद्धि होती है इसलिए देवता के पश्वा द्वारा ग्रामीणों को चुनकर बाण नचाने के लिए आमंत्रित किया जाता है। और बाणों का गिरना अपशगुन माना जाता है। छुवा–छूत में पश्वा पर देवता अवतरित नही होता है। धूप, दीपक, सिंदूर, व जुन्याल (चावल) व साल देवताओं के लिए आवश्यक सामग्री है।

बगड्वाल देवता

बगड़वाल देवता के बारे में कहा जाता है कि ये बगोड़ी के बगड्वाल है। नीती घाटी क्षेत्र के बगड्वाल देवता का नृत्य शेष गढ़वाल के नृत्य के समान होता है। बगड्वालों के बारे में मान्यता है कि जब टिहरी नरेश पर बागोड़ी के बगड्वाल दोष लगे तब इस दोष से मुक्ति हेतु राजा ने बगड्वालों को पूरे गढ़वाल क्षेत्र में नचाने का आदेश दिया, तब से आज तक इस क्षेत्र में बगड्वाल नृत्य होते है।[12] इनके द्वारा गाये जाने वाले गीतों में उन लोगों पर व्यतीत होन वाले दुःख का वर्णन होता है। यह नृत्य भूतनृत्य के समान होता है।

भूत नृत्य

नीती घाटी के भोटिया जनजाति के लोगों में यह विश्वास है कि मनुष्य मरने के बाद उसकी आत्मा किसी के शरीर में नवजीवन धारण करने से पहले कुछ समय तक भूत (आत्माओं के अवतार) बनकर भटकता है। जिसे मारछा व तोलछा बोली में 'भूत ओथरना' कहते है। जैसे जब कोई व्यक्ति अल्पावस्था या आधे उम्र में मर जाता तो वह अपने किसी सगे–सम्बन्धी पर अवतार लेता है, इसे स्थानीय बोली में 'भूत ओथरिगू'(अवतार लेना) कहते है। नीती घाटी क्षेत्र के नजदीकी इलाकों में रहने वाले 'घड़य्या'(भूत को नचाने वाला) के द्वारा भूत नचाया जाता है, जिसे स्थानीय बोली में लोग 'भूत नाचण' कहते है।

देवताओं के परिचय के अद्भुत कार्य

देवी–देवताओं (भूमियाल, पाण्डव व कौरव आदि) के 'पश्वा' अपना शक्ति का परिचय विभिन्न क्रियाओं जैसे – तलवार से जीब काटकर कभी तीन–चार तलवारों से पीठ पर वार करके, जले हुए कोयलों के ऊपर खड़े होकर, नाभि या गले पर कटार ठोककर, कण्डाली व काँटों की सय्या पर लेटकर तो कभी अपने पीठ पर तलवारों से वार करके देते है। इस प्रकार के कार्य केवल देवता के अवतार के समय ही किया करते है। कार्य सम्पन्न होने के बाद उक्त कार्य करने वाले लोगों के अंगों पर किसी प्रकार का कोई प्रभाव नही पड़ने से देवताओं की शक्ति का विश्वास होता है। यही कारण है कि आज भी इस क्षेत्र के लोगों में अपने देवी–देवताओं की आस्था बनी हुइ है और वे इन देवी–देवताओं की पूजा के लिए सुदूर क्षेत्र में रहने के बावजूद इस क्षेत्र में आते है।

अन्य देवताओं की पूजा

सिधवा व विधवा की पूजा भेड़–बकरियों के संरक्षक के रूप में किया जाता है। बकरी के बीमार होने या खो जाने पर इन देवताओं की पूजा की जाती है।[13] कुछ ऐसे देवताओं की पूजा भी की जाती है कि जो अनिष्टकारी शक्तियां रखती है। जैसे भैरव देवता और कच्चा देवता। इन देवताओं की पूजा बलि देकर की जाती है, जिन्हें 'घात का देवता' कहा जाता है। जो व्यक्ति इस प्रकार के कार्य करता था उसे 'घत्योर' कहते, इन देवताओं को जल्दी ही प्रभाव डालने वाले व अनिष्टकारी माना जाता है। इन्हें सन्तुष्ट करने के लिए दिया जाने वाला पूजा को 'जूठा पूजा' कहते है। ये शिल्पकार वर्ग के लोगों के पूज्य देवता होते है। जब नयी नवेली दुल्हन की ड़ोली को किसी पुल को पार ले जाया जाता है तो उस समय बकरी की बलि दी जाती है कि मायके से चली आ रही बुरी आत्माओ से मुक्ति मिल सके ताकि दुल्हन अपने नये घर में खुःशी से रहे।

पश्वा के नियम

देवी–देवताओं के पश्वा पर जिस दिन से देवता अवतार लेता है, वह आदमी उस दिन से हाथ में चाँदी के देवता के निशाण 'धगुले' व 'अंगूठी' पहनता है। इस दिन के बाद 'पश्वा' देवता की शक्ति को बनाये रखने के लिए 'बाणू' (परहेज) या नियम से रहते है।[14] जैसे– 'जूठा–पीठा' (छुवा–छूत) से दूर रहना, दूसरे का जूठा नही खाना आदि। शादी ब्याह के समय पर या जब कोई सामाजिक कार्य हो रहा हो जिसमें सभी लोगों को एक साथ बैठाकर खाना खिलाया जाता है, ऐसे कार्यों में भी पश्वा लोगों को अलग स्थान पर बैठाकर खाना दिया जाता है ताकि उनके द्वारा किया जाने वाला नियम टूट न जाय। यदि कोई व्यक्ति देवता की शक्ति का गलत प्रयोग करता है तो उसे हानि उठानी पड़ सकती है। बदलते समयानुसार होने वाले परिवर्तनों के कारण भावी पीढ़ी पुराने नियमों की अनदेखी कर रही है जिससे इन लोगों का पश्वा पर से विश्वास उठता जा रहा है। इस प्रकार की उपेक्षापूर्ण व्यवहार से आज देवता के पश्वा भी नाराज लग रहे है, जिस कारण दैवीय शक्ति पहले की अपेक्षा धीरे–धीरे कम होती जा रही है।

भोग सामग्री (अग्याव)

देवी–देवताओं को भोग बनाने के लिए गाँव के प्रत्येक परिवार से उगाया जाने वाला समान 'अग्याव' कहलाता है। 'अग्याव' उगाने (इकट्ठा करने) का कार्य गाँव के 'बारियों' (देव कार्यों को सम्पन्न करने के लिए नियुक्त परिवार) का होता है। जब भी देवताओं को पूजने का दिन–बार आता है, उस दिन पंचायती 'खोवा'(चौक) में या 'धर्मानी' (धार्मिक कार्यों को करने वाला चौक) में प्रत्येक परिवार का सदस्य बारी को देता है। जिसे बारी इकट्ठा करके देवताओं का भोग लगाता है, और फिर प्रत्येक परिवार को 'पुज्ये' (पूजा में बना भोग) बाँटता है। अग्याल में फाफर का आटा (कणकू), गेह का आटा, तेल, गुड़, घी, चावल आदि चीजें दी जाती है। भोग में लाडू (फाफर के आटे से बना गोल मीठा व सादा लड्डू), च्योंचू

(सिल्दू), इसे शौका जनजाति में इसे धलं कहते है।[15] रोंट, प्रसाद, भात(चावल) आदि बनाया जाता है।

इन जनजातियों में बलि प्रथा सदियों से बनी हुई है, हालांकि वर्तमान में बहुत कम हो गयी है लेकिन कुछ अवसरों पर बलि देने की परम्परा बनी हुई है। बकरी की बलि देने से पूर्व उसके ऊपर पानी डाला जाता है जब वह बकरी अपने शरीर को पूरी तरह हिलाता है तब यह समझा जाता कि देवता ने इसे स्वीकार कर लिया है, जिसके बाद उसे मार दिया जाता है। इसे शौका जनजाति में 'ठूमो' कहते है।[16] बलि दी जाने वाले बकरियों का अलग–अलग कार्यों में प्रयुक्त होने के कारण अलग–अलग नाम दिया जाता है।

जस्करा बाकरू

जस (खुःशी) के बदले दिया जाने वाला बकरी को 'जसकरू बाकरू' कहा जाता है। जब कोई व्यक्ति अपनी खुःशी से दो बकरियां भी एक साथ बलि के लिए देता है, उन्हें 'जौंवा बाकरा' कहते है। द्रोणगिरि के ईष्ट देवता पर्वत देवता को 'जौंवा' बकरी चढ़ाया जाता है।

थौव बाकरू

देवता के मंदिर के चौक में अन्य देवताओं के आगमन पर मारा जाने वाला बकरी 'थौव' (जगह या स्थान) 'फुरड़ी बाकरू' (बकरी) कहलाता है।

च्वख्यूण बाकरू

जब किसी मूर्ति या स्थान की शुद्धि के लिए कोई बकरी बलि दी जाती है तो उसे 'च्वख्यूण' बाकरू कहते है।

छीछड़े

किसी दुर्घटना में असामयिक मृत्यु हो जाने पर उस व्यक्ति की आत्मा की शांति के लिए 'छीछड़े' (आत्मा छोड़) के लिए बकरी की बलि देने के बाद आत्मा के शांति की पूजा की जाती है। उसे छीछड़े बकरी कहते है।

गाँव की शुद्धिकरण के लिए हर 5 या 10 साल में महायज्ञ व हवन कराते है। इस आस्था के साथ कि गाँव में खुशहाली व समृद्धि आयेगी, अनिष्टकारी शक्तियां नष्ट हो जायेगी व रोग व्याधि दूर हो जायेंगी। कई विशेष प्रकार के भव्य आयोजन होते है, जो 20 व 30 सालों में एक बार आयोजित किया जाता है। जैसे द्योराबन्यात, उबेद, जेलम गाँव में 20 वर्ष बाद आयोजित होने वाला सीता पूजन 'सितूण' आदि। नीती घाटी पहुँचने के बाद प्रत्येक गाँव में शीतकालीन आवास को जाने तक अनेक प्रकार के आयोजन होते है, जिसमें विभिन्न देवी–दवताओं की पूजा की जातो है।

इस क्षेत्र में अनेक त्यौहार मनाये जाते है– आषाढ़ संक्रान्ति सीता पूजन (सीतूण), बैरी तोको, रक्षा बन्धन, घी संक्रांति, नन्दा अष्टमी, दीपावली, भीरी, ग्वल पुजै, अंग्लयार पुजै, आंखुडू पुजै (गाय के बछड़े की पूजा), नाग पंचमी, फुल संक्रांति, नवरात्रा, होली, पंचमी आदि। इन अवसरों पर हिन्दू परम्परानुसार पूजा–अर्चना की जाती है तथा पूरी–पकौड़ी तथा स्थानीय भोग सिल्दू व जान को अपने पित्र देवताओं व अन्य देवताओं के आह्वान के साथ सभी गाँव के लोग एक स्थान पर या घर–घर जाकर बने हुए भोग को खाकर सम्पन्न करते है।

निष्कर्ष

इस प्रकार विभिन्न प्रकार के देवी–देवताओं की पूजा अर्चना तथा अनेक त्यौहारों को मानने वाले इन जनजातियों का धर्म हिन्दूधर्म से जुड़ा हुआ है। कुछ विशिष्ट देवताओं की पूजा पद्धति स्थानीय है जिनका इनकी आस्था व विश्वास के साथ सम्बन्ध जुड़ा हुआ है। ऐसा माना जाता है कि पशुचारक होने के कारण ये जंगल, भूमि, आकाश, वायु आदि सभी देवताओं की पूजा करते थे तथा अपने पशुओं तथा खाद्यान्न की सुरक्षा के लिए कई सालों में विशिष्ट पूजा का आयोजन करते थे। जिन्हें आज के युवा नही जानते है। इस प्रकार युवाओं का पलायन व शिक्षा के कारण पौराणिक स्थलों को छोड़कर निचले क्षेत्रो में बसने के कारण इन धार्मिक कार्यों में शिथिलता तथा परिवर्तन आया है जिन्हें इन लोगों द्वारा अगर समय पर नही बचाया गया तो ये बीते दिनों की बात हो जायगी फिर यह एक रहस्य ही बना रहेगा कि फलां पूजा इस तरह होती थी या होती होगी।

इस क्षेत्र के गाँवों में देवताओं के नाम स्थानीय रूप से भिन्न है जैसे भूमियाल देवता को कोई पर्वत, कोई फैला व कोई घन्याल तथा कोई हिंवाल देवता के नाम से पूजते है। लेकिन सभी गाँवों के देवताओं को दिया जाने वाली पूजा विधि व सामग्री एक समान है। ऐसा माना जा सकता है कि इस इन जनजातियों में पायी जाने वाली विभिन्नता के बाद भी परम्पराओं का अनूठा संगम उनके भू–क्षेत्र तथा वातावरण से प्रभावित रहा है। प्राकृतिक शक्तियों व भूमि आदि के देवी–देवताओं पर असीम आस्था और उन्हें सम्पन्न करने के तरीकों का अनूठा समन्वय आज भी देखने को मिलता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. वाल्टन, एच0जी0 (1910) हिन्दी संस्करण प्रकाश थपलियाल (2005)–गढ़वाल गजेटियर, पृ01।
2. आलम सिह चौहान (1995) – रंड्पा, पृ0 सं0– 60।
3. जोशी, अवनीन्द्र कुमार (1983)–भोटांतिक जनजाति, पृ0 71
4. साक्षात्कार– श्री आलम सिंह चौहान, ग्राम–गमसाली,।
5. साक्षात्कार– श्री जगत सिंह पाल, ग्राम– बाम्पा।
6. जोशी, अवनीन्द्र कुमार (1983) –भोटांतिक जनजाति, पृ0 67
7. वाल्टन, एच0जी0 (1910) हिन्दी संस्करण प्रकाश थपलियाल(2005)–गढ़वाल गजेटियर, पृ0 160।
8. साक्षात्कार– श्री नारायण सिंह राणा, ग्राम– जेलम।
9. जोशी, अवनीन्द्र कुमार (1983)–भोटांतिक जनजाति, पृ0 72
10. जोशी, अवनीन्द्र कुमार (1983)–भोटांतिक जन–जाति, पृ0 47।
11. साक्षात्कार– श्रीमती जेठुली देवी बिष्ट, ग्राम–सेंगला।
12. साक्षात्कार– श्री नारायण सिंह राणा 'कुजबुटिया', ग्राम– जेलम।
13. साक्षात्कार– श्री भगत सिंह राणा, ग्राम–जेलम।
14. साक्षात्कार– ग्राम – मलारी।
15. जोशी, अवनीन्द्र कुमार (1983)–भोटांतिक जनजाति, पृ0 70।
16. उपरोक्त।

अग्याल एकत्र करती महिलाएं

नन्दा अष्टमी के जागर में मग्न पुरूष वर्ग (जेलम)